प्रश्न-हिन्दी-साहित्य के इतिहास लेखन की परम्परा व उसकी आधारभूत सामग्री पर प्रकाश डालते हुए साहित्येतिहास के पुनर्लेखन की समस्याओं को स्पष्ट कीजिए।

अथवा

हिन्दी-साहित्य के इतिहास लेखन परम्परा को स्पष्ट कीजिए। उसकी आधार-भूत सामग्री क्या है? तया उसके पुनर्लेखन में किन-किन रामस्याओं का सामना करना पड़ता है?

अथवा

साहित्येतिहास के पुनर्लेखन की समस्याएँ बताइए।

अथवा

हिन्दी साहित्येतिहास की आधारभूत सामग्री और उसके पुनर्लेखन की समस्याएँ स्पष्ट कीजिए।

अथवा

हिन्दी साहित्येतिहास की आधारभूत सामग्री पर विचार करें।

अथवा

हिन्दी साहित्येतिहास की लेखन परम्परा का संक्षिप्त परिचय लिखें?

उत्तर- साहित्येतिहास लेखन की प्रक्रिया सामान्य रचनाओं से सर्वथा भिन्न प्रकार की है। सर्वप्रथम साहित्येतिहास लेखन की सामग्री का निर्धारण करना पड़ता है। साहित्येतिहास लेखन की सामग्री साहित्येतिहास का मूल स्रोत कही जा सकती है। इस सामग्री का संकलन एवं निर्धारण नितान्त आवश्यक है। उसी को आधार बनाकर ही साहित्येतिहास लिखा जा सकता है। इस सामग्री को हम दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं-

(क) अन्तःसाक्ष्य से सम्बन्धित सामग्री।

(ख) बाह्य साक्ष्य से सम्बन्धित सामग्री।

कुछ विद्वान इनको प्रथम स्तर की सामग्री और द्वितीय स्तर की सामग्री भी कहते हैं। लेकिन इस संबंध में उल्लेखनीय बात यह है कि साहित्येतिहास लिखने से पूर्व लेखक को भिन्न-भिन्न स्रोतों से सामग्री का संग्रह करना चाहिए। तदर्थ वह घटनाओं, वृत्तान्तों, तत्कालीन परिस्थितियों, प्रवृत्तियों तथा रचनाकारों के जीवन वृत्तान्त का सहारा ले सकता है।

(क) अन्तःसाक्ष्य से सम्बन्धित सामग्री- प्रसिद्ध साहित्येतिहासकार डॉ. रामकुमार वर्मा ने अन्तःसाक्ष्य के अन्तर्गत ऐसे अनेक ग्रन्थों का उल्लेख किया है जो हिन्दी साहित्येतिहास की आधारभूत सामग्री से सम्बन्धित हैं। इनमें सर्वप्रथम **"चौरासी वैष्णवन की**

वार्ता" और **"दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता"** का उल्लेख किया जा सकता है। इन दोनों का रचनाकाल संवत् 1625 के आस-पास माना गया है तथा इनके रचयिता गोकुलनाथ थे। इन ग्रन्थों में पुष्टि-मार्ग में दीक्षित वैष्णव-भक्तों और कवियों की जीवनियों संकलित हैं। इसी सन्दर्भ में "नाभादास" द्वारा रचित "**भक्तमाल**" का उल्लेख करना भी आवश्यक है। इसका रचना काल संवत् 1642 स्वीकार किया गया है। इसी श्रृंखला में "**श्री गुरु ग्रन्थ साहिब**" का भी उल्लेख किया जा सकता है। इस ग्रन्थ से हमें अन्तःसाक्ष्य की पर्याप्त सामग्री प्राप्त हुई है। इसके संग्रहकर्ता श्री गुरु अर्जुन देव जी महाराज थे तथा संवत्-काल संवत् 1661 है। 'श्री गुरु ग्रन्य साहिब' में कबीर, नानक, रैदास आदि 16 संतों की वाणी का संकलन किया गया है।

बेनी माधवदास द्वारा रचित "गोसाई चरित" में गोस्वामी तुलसीदास का जीवन-चरित वर्णित किया गया है। इसका रचनाकाल संवत् 1687 के लगभग है। शिव सिंह सेंगर ने "कालिदास" नामक रचना को आधार बनाकर "**शिवसिंह सरोज"** की रचना की थी। ""कविनामावली" के रचयिता कवि सूदन हैं तथा इसका रचनाकाल संवत् 1810 हैं। दो अन्य रचनाएँ हैं- "विद्वान मोद तरंगिणी" तथा "श्रृंगार-संग्रह"। प्रथम रचना में 45 कवियों की रचनाएँ संकलित है और दूसरी में 125 कवियों की कविताओं को उदाहरण दिए गए है।

उपर्युक्त सभी रचनाएँ अन्तः साक्ष्य सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण सामग्री प्रदान करती हैं। इन रचनाओं में संकलित विभिन्न कवियों की रचनाओं को पढ़कर उनकी साहित्यिक प्रवृत्तियों की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। अभी तक जितने भी हिन्दी साहित्य इतिहास लिखे गए हैं, उनमें इन रचनाओं से पर्याप्त सहयोग लिया गया है और भविष्य में भी ये रचनाएँ अन्तः साक्ष्य का आधार बनी रहेंगी। लेकिन इस सामग्री का उपयोग करते समय तनिक सावधानी बरतने की आवश्यकता है। अनेक बार रचनाकार भावनाओं में बहकर किसी कवि विशेष की अतिशयोक्तिपूर्ण ढंग से प्रशंसा करने लगता है।

(ख) बाह्म-साक्ष्य से सम्बन्धित सामग्री-बाह्य-साक्ष्य के अन्तर्गत प्राचीन साहित्य, इतिहास तथा शिलालेख और जनश्रुतियों से उपयोगी सामग्री प्राप्त की जा सकती है। साहित्यिक सामग्री से सम्बन्धित **"कर्नल टॉड का राजस्थान"** (संवत् 1889), **नागरी प्रचारिणी सभा की रिपोर्ट,** मोती लाल मनेरिया द्वारा रचित **"राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज",** बिहार से प्राप्त "**हिन्दूइज्म एवं ब्राह्मणिज्म", "हिस्ट्री ऑफ सिक्ख रिलीजन", "इण्डियन विजिम", "कबीर एण्ड द कबीर पंथ", "गोरखनाव एण्ड दि कनफटा योगीज", "एन आउटलाइन ऑफ द रिलीजियस लिटरेचर ऑफ इण्डिया"** आदि कुछ उल्लेखनीय ग्रन्थ हैं,

जिनकी सामग्री साहित्येतिहास लेखन के लिए काफी उपयोगी सिद्ध हुई है। इसी प्रकार से भारत के प्राचीन शिलालेख भी ऐतिहासिक तथ्यों पर सुमचित प्रकाश डालते हैं। यहाँ जैन शिलालेख तथा शलख के शिलालेख का हवाला देना उचित होगा। जैन शिलालेख तो चन्देल राजा परमाल का है और शलख का शिलालेख आबू पर्वत के राजा का है। कुछ ऐतिहासिक स्थानों में "कबीर चौरा", "अस्सी घाट", "कबीर की समाधि", "जायसी की समाधि", "तुलसी की प्रत्यर की मूर्ति", "नरसिंह जी का मन्दिर" आदि कुछ प्राचीन ऐतिहासिक स्थान भी हैं, जो कि साहित्येतिहास लेखन के लिए पर्याप्त सामग्री जुटाते हैं।

कुछ जनश्रुतियाँ भी हैं जिनका उपयोग साहित्येतिहास लेखन में किया गया है, लेकिन जनश्रुतियों में बहुत कम सत्य रहते हैं। जनश्रुति में प्रायः कल्पना का प्रयोग अधिक होता है, क्योंकि यह एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति को सुनाई जाती है। इसलिए साहित्येतिहास के खोजी विद्वान् को सावधानीपूर्वक जनश्रुतियों का प्रयोग करना चाहिए।

साहित्येतिहासकार को उपयोगी सामग्री का संकलन करते समय अन्य विद्वानों के शोधकार्य की भी सहायता लेनी चाहिए, क्योंकि शोधात्मक सामग्री का भी विशेष महत्त्व रहता है। जिन बिन्दुओं पर ध्यान देना आवश्यक है जो इस प्रकार से है:-

(१).सामग्री का निरीक्षण-परीक्षण-साहित्येतिहास लेखक को चाहिए कि वह साहित्येतिहास लिखने से पहले प्राप्त सामग्री का अच्छी प्रकार से निरीक्षण-परीक्षण कर ले। ऐसा करने से निरर्थक सामग्री को लेखन के क्षेत्र से बाहर निकाला जा सकता है। इस प्रक्रिया के लिए लेखक को आन्तरिक निरीक्षण और बाह्य निरीक्षण-दोनों का आश्रय लेना पड़ता है। ग्रन्थ का कागज, स्याही और लिपि आदि बाह्य निरीक्षण से सम्बन्धित हैं। लेकिन रचना की विषय-वस्तु आन्तरिक निरीक्षण से सम्बधित है। इस निरीक्षण और परीक्षण से रचना की प्रामाणिकता और प्राचीनता का निर्धारण किया जा सकता है। उदाहरण के रूप में, **चन्द्रबरदाई** रचित **'पृथ्वीराजरासो'** इन्हीं परीक्षणों के आधार पर अप्रामाणिक रचना सिद्ध की गई है।

(२).मूल्यांकन की आवश्यकता- सामग्री का निरीक्षण-परीक्षण करने के पश्चात् साहित्येतिहास के लेखक का दूसरा कदम है-सामग्री का उचित मूल्यांकन करना और यह मूल्यांकन लेखक की निजता से सम्बन्धित होता है, लेकिन साहित्येतिहास लेखक से यह आशा की जाती है कि उसका मूल्यांकन प्रमाणों पर आधारित होगा।

(३).**सामग्री का वर्गीकरण-** सामग्री के संकलन और मूल्यांकन के बाद अगला कदम है-सामग्री का वर्गीकरण करना। साहित्येतिहास के स्वरूप को समझने के लिए यह वर्गीकरण अत्यधिक सहायक होता है। सभी साहित्येतिहास लेखक अपने-अपने तरीके से वर्गीकरण करते रहे हैं। इस सन्दर्भ में **डॉ. सुमन राजे** का कथन है- "बिखरी तया फैली हुई तथ्य सामग्री को

व्यवस्थित रूप प्रदान करने, उसकी परस्पर तुलना करने, सामग्री को शीघ्र ग्राहम और स्थायी रूप में स्मरणीय बनाने के लिए वर्गीकरण आवश्यक होता है। इससे सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि वर्गीकरण के द्वारा महत्त्वपूर्ण तथ्य विशेष रूप से प्रकाश में आ जाते हैं तथा व्यक्तिगत इकाइयों की शरण में आकर अपनी पृयक-सत्ता समाप्त कर देते हैं।"

(४). सामग्री का प्रस्तुतिकरण- सामग्री का प्रस्तुतिकरण अन्तिम महत्त्वपूर्ण कदम है। अच्छे साहित्य के निर्माण के लिए सामग्री का अच्छा प्रस्तुतिकरण करना नितान्त आवश्यक है। सामग्री के प्रस्तुतिकरण में लेखक के समक्ष अनेक कठिनाइयाँ आ सकती हैं, किन्तु एक सुशिक्षित लेखक अपनी सूझ-बूझ से इन कठिनाइयों को दूर करते हुए प्रस्तुतीकरण में सफल हो जाता है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि साहित्येतिहास लेखन प्रक्रिया में साहित्येतिहास के स्रोतों, सामग्री, सामग्री के संकलन तथा मूल्यांकन, वर्गीकरण और निर्धारण का अत्यन्त विशिष्ट स्थान है। एक प्रशिक्षित लेखक उपर्युक्त सभी तथ्यों को ध्यान में रखकर साहित्येतिहास ग्रन्थों की रचना करता है तथा अपनी रचनाओं में प्रामाणिकता तथा विश्वसनीयता का समावेश करता है।

- **हिन्दी साहित्येतिहास लेखन की आधार-भूत सामग्री-** हिन्दी-साहित्येतिहास लेखन की परम्परा की शुरुआत सन् 1847 से मानी जा सकती है। इस विषय में साहित्येतिहासकार के लिए यह आवश्यक है कि वह विभिन्न स्रोतों से नई-नई सामग्री का संकलन करे, पूर्ववर्ती साहित्यकार के अनुसंधान पर भी दृष्टि रखे। इस संबंध में **डॉ० शिवकुमार शर्मा** ने ठीक ही लिखा है-

"साहित्येतिहास-लेखन के लिए विपुल-सामग्री की आवश्यकता होती है जिसे इतिहासकार वर्षों की बोर के बाद एकत्र करता है। उसे इसके लिए दूसरे विद्वानों के अनुसंधान पर आश्रित होना पड़ता है, क्योंकि समस सामग्री की मौलिक खोज तथा उसकी प्रामाणिकता का परीक्षण एक विद्वान् के वश की बात नहीं है।"

आधुनिक युग में हिन्दी-साहित्येतिहास लेखन में जिन सामग्रियों की सहायता ली जाती है उन्हें मुख्य रूप से पाँच वर्गों में बाँटा जा सकता है-

1. साहित्यकारों की प्रकाशित एवं अप्रकाशित रचनाएँ।

2. साहित्यकारों एवं साहित्यिक रचनाओं पर प्रकाश डालने वाले ग्रंथ।

3. साहित्यिक विधाओं के अंगों, प्रवृत्तियों आदि से सम्बन्धित आलोचनात्मक ग्रंथ एवं शोध-प्रबन्ध।

4. प्राचीन साहित्यकारों के काल-निर्धारण आदि के निर्णय में योगदान देने वाली ऐतिहासिक सामग्री।

5. विभिन्न युगों की सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि परिस्थितियों पर प्रकाश डालने वाली सामग्री।

(१). **साहित्यकारों की प्रकाशित एवं अप्रकाशित रचनाएँ-** साहित्येतिहास लेखन में साहित्यकारों की प्रकाशित रचनाएँ तो आसानी से उपलब्ध हो जाती हैं। साहित्येतिहासकार इन प्रकाशित रचनाओं के आधार पर सुगमता से उन साहित्यकारों के काल-निर्धारण, साहित्यिक प्रवृत्तियों आदि का आकलन कर सकता है। परन्तु अनेक साहित्यकारों की हजारों रचनाएँ अभी भी अप्रकाशित हैं। ऐसी रचनाओं का नामोल्लेख तो मिल जाता है परन्तु उनकी प्रामाणिक प्रतिलिपि के अभाव में उन रचनाओं का सही साहित्यिक मूल्यांकन करना असम्भव रहता है। वस्तुतः यदि हिन्दी-साहित्येतिहास लेखन-परम्परा को निरंतर आगे बढ़ाना है, तो निश्चय ही विश्वविद्यालयों में हिन्दी के शोधार्थियों को इस दिशा में अनुसंधान या शोध करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।

(२). साहित्यकारों एवं साहित्यिक रचनाओं पर प्रकाश डालने वाले ग्रंथ-हिन्दी-साहित्येतिहास लेखन में प्रायः इतिहासकारों को उन ग्रंथों की भी सहायता लेनी पड़ती है जो स्वयं तो साहित्यिक कृतियाँ नहीं हैं, परन्तु उनमें प्राचीन साहित्यकारों एवं उनकी रचनाओं का परिचय अवश्य मिलता है। ऐसे ग्रंथों में 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता', 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' 'भक्तमाल', 'गुरुग्रंथ साहब', 'भक्तमाल', 'कालिदास-हजारा' आदि प्रमुख हैं। इन ग्रंथों में प्राचीन और मध्यकालीन कवियों व काव्य-रचना-रचनाओं के बारे में पता चलता है। आधुनिक युग में अनेक लेखकों की रचनाओं के वृत्त-संग्रह निदेशिकाओं के रूप में प्रकाशित हो रहे हैं जो साहित्येतिहास के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

(३).साहित्यिक विधाओं के अंगों, प्रवृत्तियों आदि से सम्बन्धित आलोचनात्मक ग्रंथ एवं शोध-प्रबन्ध-हिन्दी-साहित्येतिहास लेखन परम्परा अभी विकासशील अवस्था में है। हिन्दी-साहित्य की अनेक विधाएँ हैं, उन विधाओं के अनेक अंग, धाराएँ आदि हैं। साहित्येतिहासकार के लिए इन सभी का सर्वांगीण अध्ययन करना असम्भव है। फलतः यह साहित्यिक विधाओं, प्रवृत्तियों आदि से सम्बन्धित नूतन आलोचनात्मक ग्रंथों, समीक्षात्मक ग्रंथों, शोध-प्रबन्धों आदि की सहायता लेता है। उदाहरण के लिए श्री प्रभुदयाल मीतल का 'चैतन्य-सम्प्रदाय और उसका साहित्य', डॉ० मोतीलाल मनेरिया का 'राजस्थानी पिंगल साहित्य' आदि समीक्षात्मक ग्रंथ

अथवा शोध प्रबंध अपने विषय पर नूतन दृष्टिकोण, नई खोज प्रदान करते हैं जिनका साहित्येतिहासकार उपयोग कर सकता है।

4. प्राचीन साहित्यकारों के काल-निर्धारण आदि के निर्णय में योगदान देने वाली ऐतिहासिक सामग्री- यह किसी भी भाषा व समाज का दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि उत्तकी प्राचीनतम साहित्यिक प्रतियाँ या तो नष्ट हो गई हैं, या लुप्त हो चुकी हैं। हिन्दी की प्राचीन साहित्यिक रचनाओं की भी ऐसी ही स्थिति है। अतः हिन्दी के साहित्येतिहासकार को प्राचीन साहित्यकारों के काल-निर्धारण आदि के निर्णय में योगदान देने वाली ऐतिहासिक सामग्री यथा-शिलालेख, वंशावली, अधिकार-पत्र आदि का भी सहारा लेना पड़ता है। उदाहरण के लिए - 'हरिदासी सम्प्रदाय' के प्रवर्तक स्वामी हरिदास के काल-निर्धारण में 'आईने अकबरी' की सहायता मिलती है जिसमें अकबर व स्वामी हरिदास की भेंट का वर्णन हुआ है।

5. विभिन्न युगों की सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि परिस्थितियों पर प्रकाश डालने वाली सामग्री- जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि साहित्येतिहास में केवल साहित्यकार एवं उनकी कृतियों को नामोल्लेख ही नहीं होता, बल्कि किसी भी युग के साहित्यकार की सामाजिक, राजनीतिक आदि परिस्थितियों का भी वर्णन होता है, जो साहित्यकार की प्रवृत्ति पर प्रभाव डालती हैं। अतः साहित्येतिहासकार साहित्येतिहास-लेखन में उन सामग्रियों जसे भी सहायता लेता है जो किसी वांछित युग-विशेष की परिस्थितियों पर प्रकाश डालती हैं।

• हिन्दी साहित्येतिहास के पुनर्लेखन की समस्याएँ-

हिन्दी साहित्येतिहास के बारे में आज भी शोध कार्य हो रहा है। धीरे-धीरे कुछ नये तथ्य सामने आ रहे हैं। अतः साहित्येतिहास लेखन की प्रक्रिया निरन्तर चल रही है। प्रत्येक नवीन प्रयास आधुनिकतम शोध के आधार पर नवीन दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। अन्य शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि हिन्दी साहित्येतिहास का पुनर्लेखन जारी है। **गार्सा-दा-तॉसी** से लेकर **डॉ. नगेन्द्र** तक के साहित्येतिहासकारों का यदि अध्ययन किया जाए तो यह स्वतः स्पष्ट हो जाता है कि उनके दृष्टिकोणों में अनेक भेद हैं। अतः साहित्येतिहास लिखना एक चुनौती का कार्य है। इस सन्दर्भ में अनेक समस्याएँ उभर कर हमारे सामने आती हैं —

1. काल विभाजन की समस्या

2. नामकरण की समस्या

3. साहित्यकारों के चयन तथा निर्धारण की समस्या

4. साहित्येतिहास-लेखन पद्धति के चुनाव की समस्या

5. नूतन खोजों की प्रामाणिकता की समस्या

6. मूल्यांकन की समस्या

7. अन्य भाषाओं के साहित्य के समावेश की समस्या

8. अनूदित रचनाओं को हिन्दी साहित्य में सम्मिलित करने की समस्या

1. काल विभाजन की समस्या-

हिन्दी साहित्येतिहास के पुनर्लेखन में सबसे पहले काल-विभाजन की समस्या आगे आती है। हिन्दी-साहित्य का काल-विभाजन किस आधार पर किया जाए, उसका प्रारम्भ कब से माना जाए-इन सभी विषयों पर साहित्येतिहासकारों में मतभेद हैं। उदाहरण के लिए जार्ज ग्रियर्सन ने हिन्दी साहित्य का प्रारम्भ 700 ई. से माना है, तो आचार्य शुक्ल ने संवत् 1050 से माना है। उनके बाद के साहित्येतिहासकार डॉ० रामकुमार वर्मा ने संवत् 750 से हिन्दी-साहित्य का आरम्भ माना है। इसी प्रकार काल-विभाजन में भी विद्वानों में पर्याप्त मतभेद हैं। जार्ज ग्रियर्सन ने हिन्दी साहित्य के इतिहास को कुल बारह भागों में, मिश्रबंधुओं ने पाँच भागों में, शुक्ल ने चार भागों में बाँटा है। अतः हिन्दी साहित्येतिहास के पुनर्लेखन में सबसे पहले काल- विभाजन की समस्या सामने आती है। नई-नई खोजों, विद्वानों के अपने भिन्न मतों आदि के कारण किसी साहित्येतिहास के काल-विभाजन को अंतिम रूप से सत्य मानकर स्वीकार नहीं किया जा सकता। वैसे भी किसी भी नई साहित्यिक प्रवृत्ति का प्रादुर्भाव एक दिन में नहीं होता है। अतः साहित्येतिहास लेखन सामान्य इतिहासकार की भाँति यह नहीं कह सकता है कि अमुक दिनांक या वर्ष तक इस साहित्यिक प्रवृत्ति का प्रचलन था तथा उसके अगले दिन किसी नई साहित्यिक प्रवृत्ति का आरम्भ हुआ।

2. नामकरण की समस्या-

हिन्दी साहित्येतिहास के पुनर्लेखन में काल-विभाजनों का नामकरण करना। एक समस्या के रूप में उभर कर आता है। कोई साहित्येतिहासकार किसी युगीन साहित्य की प्रवृत्तियों के आधार पर उस युग का नामकरण करना चाहता है तो कोई साहित्यकार के नाम पर उस युग का नामकरण करता। उदाहरण के लिए **जार्ज ग्रियर्सन** ने अपने साहित्येतिहास में काल-विभाजन करके उनका नामकरण कवि, सम्प्रदाय और साहित्यिक प्रवृत्ति के आधार पर किया है; यथा-1. चारण काल 2. पन्द्रहवीं शती का धार्मिक पुनर्जागरण 3. जायसी और उनकी कविता 4. ब्रज का कृष्ण सम्प्रदाय 5. मुगल दरबार 6. तुलसीदास आदि।

इसी प्रकार **आचार्य शुक्ल** ने आदिकाल को काव्य-प्रवृत्ति के आधार पर **'वीरगाथा काल'** कहा है जिसे कि परवर्ती साहित्येतिहासकारों ने अमान्य घोषित कर दिया है। अतः हिन्दी साहित्येतिहास पुनर्लेखन में नामकर भी एक समस्या के रूप में उभरता है।

3. साहित्यकारों के चयन व निर्धारण की समस्या- हिन्दी भाषा का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। अतः इस साहित्येतिहास लेखन में साहित्येतिहासकार के समक्ष यह समस्या भी उठती है कि वह किस साहित्यकार को अपने साहित्येतिहास में स्थान दे और किसे न दे। यदि वह किसी साहित्यकार को उसमें स्थान दे तो किस आधार दे और उसकी समीक्षा या विवेचना किस स्तर तक करे। इसके अतिरिक्त एक समस्या यह भी उठती है। जब साहित्येतिहासकार **आदिकालीन, भक्तिकालीन व रीतिकालीन** कवियों, साहित्यकारों का उल्लेख करता है तो वह उनकी राजस्थानी, अवधी, ब्रजभाषा की रचनाओं को अपने इतिहास में स्थान देता है परन्तु जैसे ही व आधुनिक युग में प्रवेश करता है तो द्विवेदी युग, छायावाद के बाद इन उपभाषाओं के रचनाकारों व कृतियों को अपने साहित्येतिहास में स्थान नहीं देता है। आज का साहित्येतिहासकार अपने इतिहास की रचना करते समय दोहरे मापदण्ड अपनाने के लिए बाध्य है।

4. साहित्येतिहास-लेखन- पद्धति के चुनाव की समस्या- आधुनिक युग में साहित्येतिहास लेखन की अनेक पद्धतियों प्रचलित हैं। उदाहरण के लिए शिवसिंह सेंगर-कृत **'शिवसिंह सरोज'** में केवल साहित्यकारों एवं उनकी रचनाओं का उल्लेख को ही साहित्येतिहास-लेखन की पद्धति के रूप में स्वीकार किया गया है जबकि आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने **'हिन्दी साहित्य का इतिहास'** ग्रंथ में वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया। उन्होंने सामाजिक व साहित्यिक प्रवृत्तियों के आधार पर काल-विभाजन किया और इनके मध्य कारण-कार्य सम्बन्ध को भी दर्शाया। परन्तु बाद में उनकी इस पद्धति में अनेक कमियों दिखाई देने लगीं। **डॉ० नगेन्द्र** ने अपने ग्रंथ 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' में प्रत्येक काल की काव्यगत प्रवृत्तियों को आधार बनाया है परन्तु उनकी इस पद्धति का सबसे बड़ा दोष यह है कि उसमें काव्य की विभिन्न प्रवृत्तियों के आधार पर एक ही कवि का दो या अधिक बार नामोल्लोख हुआ है। अतः कहा जा सकता है कि हिन्दी साहित्येतिहास के पुनर्लेखन में पद्धति का चुनाव भी एक समस्या है क्योंकि अभी तक एक भी ऐसी पद्धति की खोज नहीं हो सकी है जो सर्वमान्य हो तथा दोष-रहित हो।

5. नूतन खोजों की प्रामाणिकता की समस्या- हिन्दी साहित्येतिहास लेखन में इतिहासकार के समक्ष अपनी नूतन खोजों की प्रामाणिकता की भी समस्या रहती है। उदाहरण के लिए हिन्दी के प्रथम कवि के सम्बन्ध में अधिकांश साहित्येतिहासकारों में मतैक्य का अभाव है। इसी प्रकार सूरदास-कृत **'साहित्यलहरी'** व **'सूरसारावली'** की प्रामाणिकता के सम्बन्ध में विद्वान् दो

गुटों में बँटे दिखाई देते हैं। **'पृथ्वीराज रासो'** की प्रामाणिकता को लेकर अधिकांश साहित्येतिहासकारों ने अपने अलग-अलग मत दर्शाएँ हैं। ऐसी स्थिति में बिना किसी ठोस प्रमाण व मापदण्ड के नया साहित्येतिहासकार किस पक्ष में अपना विचार प्रकट करे, उसके लिए यह निर्णय करना भी एक समस्या के रूप में उभरता है। इसी प्रकार पहला प्रेमाख्यान काव्य, पहली कहानी, पहला उपन्यास आदि के सम्बन्ध में भी प्रामाणिकता का अभाव बना हुआ है।

6.मूल्यांकन की समस्या- साहित्येतिहास लेखन में साहित्येतिहासकार को तटस्थ रहकर ही साहित्यकारों व उनकी रचनाओं का मूल्यांकन करना होता है। सही अर्थों रचनाकारों में रचनाओं व उनकी प्रवृत्ति के सटीक मूल्यांकन से ही किसी साहित्येतिहास की श्रेष्ठता व साहित्येतिहासकार की शक्ति का पता चलता है। परन्तु अधिकांश साहित्येतिहासकार अपनी व्यक्तिगत अनुभूतियों, रुचियों आदि के कारण निष्पक्ष व तटस्थ नहीं रह पाते तथा वे अपने साहित्येतिहास में अपनी रुचि के अनुकूल या श्रद्धा-पात्र साहित्यकारों के प्रति थोड़ा उदार भाव अपनाते हैं। उदाहरण के लिए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने श्रद्धेय कवि तुलसीदास के साथ बार-बार सम्मानसूचक शब्द 'जी' का प्रयोग करके उनके प्रति दृढ़ आस्था व निष्ठा को दर्शाया है तथा **'रामचरितमानस'** में प्रयुक्त कतिपय त्रुटियों की अवहेलना करके कवि व कृति दोनों की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। परन्तु अन्य संत या भक्त-कवियों-कबीर, सूरदास के प्रति वे वैसा उदार दृष्टिकोण नहीं अपना सके। अतः साहित्येतिहास लेखन में कृतित्व का समुचित मूल्यांकन भी एक समस्या है।

7. हिन्दी-साहित्य के इतिहास में अन्य भाषाओं के साहित्य का समावेश- हिन्दी साहित्येतिहास में अन्य भाषाओं साहित्य का समावेश करना या न करना-यह भी एक समस्या के रूप में उभरा है। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि मैथिली, ब्रज, अवधी, राजस्थानी आदि उपभाषाओं का साहित्य आरम्भ से ही हिन्दी-साहित्य का अभिन्न अंग माना गया है तथा आधुनिक काल में भारतेन्दु-युग तक ब्रज में रचित साहित्य का भी हिन्दी-साहित्य का अभिन्न अंग माना गया है तथा आधुनिक काल में भारतेन्दु-युग तक ब्रज में रचित साहित्य का भी हिन्दी-साहित्य में समावेश किया गया है परन्तु तत्पश्चात् इन उपभाषाओं की रचनाओं को सम्मिलित नहीं किया जाता है। जबकि इन उपभाषाओं में आज भी साहित्य-रचना की धारा प्रवाहित हो रही है।

8. अनूदित रचनाओं को हिन्दी साहित्य में सम्मिलित करने की समस्या- एक अन्य प्रश्न अनूदित रचनाओं से संबंधित है। क्या अनूदित रचनाओं को हिन्दी साहित्य में स्थान दिया जाना चाहिए अथवा नहीं। विद्वानों के एक वर्ग ने यह प्रश्न भी उठाया है कि क्या विश्व की अन्य भाषाओं से अनुदित हिन्दी की रचनाओं को उसमें स्थान दिया जाए या भारत की

भाषाओं से अनूदित हिन्दी रचनाओं को ही स्थान दिया जाए। भारतेन्दु और द्विवेदी युग में प्रभूत मात्रा में अनुवाद कार्य हुआ और अंग्रेजी, संस्कृत, उर्दू, बंगला, मराठी आदि भाषाओं की कुछ रचनाएँ हिन्दी में अनूदित की गई। इस संदर्भ में हम मुंशी प्रेमचंद द्वारा रचित सेवासदन, प्रेमाश्रम तथा रंगभूमि उपन्यासों की चर्चा कर सकते हैं जो मूल रूप में उर्दू में ही लिखे गए थे। लेकिन बाद में उनका अनुवाद हिन्दी में किया गया। ये तीनों उपन्यास उर्दू तथा हिन्दी दोनों भाषाओं में स्थान पा चुके हैं। इसी प्रकार गुरुमुखी लिपि में रचित पंजाबी साहित्य की भी यही स्थिति है। गुरुनानक देव द्वारा रचित साहित्य हिन्दी में स्थान पा चुका है। लेकिन फिर भी पंजाबी साहित्य की निरंतर अवहेलना की जा रही है जो किसी भी दृष्टि से उचित नहीं कहा जा सकता।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि हिन्दी साहित्येतिहास का पुनर्लेखन करते समय हमारे सामने अनेक समस्याएँ उभर कर आती हैं। लेकिन यहाँ इस बात का उल्लेख करना जरूरी होगा कि हिन्दी भाषा में निरन्तर नवीन शोध हो रहे हैं और नई-नई पद्धतियों के आधार पर साहित्येतिहासों की रचना हो रही है। संभव है कि आने वाले काल में साहित्येतिहास लेखन की समस्याओं पर विजय प्राप्त कर ली जाए।